26 नवम्बर 2021, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 40, अंक 05, कुल पृष्ठ 36

ISSN 2454 - 5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

श्री 1008 आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर सिंगोली, जिला-नीमच (म.प्र.)

पंच कल्याणक तिथि : 3 दिसम्बर से 8 दिसम्बर 2021

वीतराग-विज्ञान (460)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :

डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :

ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन :(0141)2705581, 2707458

E-mail : ptstjaipur67@gmail.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7000
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	**10000**

सम्यग्दर्शन की पात्रता

सम्यग्दर्शन की पात्रता के लिये मात्र यही तो कहा है कि चारों गतियों का कोई भी जीव, जो संज्ञी पञ्चेन्द्रिय हो, गर्भज हो, पर्याप्तक हो, भव्य हो, मन्द कषायरूप विशुद्धता का धारक हो, साकार उपयोगी हो, जागृत हो। चाहे वह अनादि अगृहीत मिथ्यादृष्टि हो या सादि। जब क्षयोपशम, देशना, विशुद्धि लब्धियों द्वारा अपने परिणामों की निर्मलता बढ़ाते हुए क्रमशः ज्ञानावरणादि समस्त सर्वघाति कर्मों की स्थिति को घटाते-घटाते अन्तः कोडाकोड़ी सागर प्रमाण से भी कम कर लेता है, तब फिर वह एक मुहूर्त में मिथ्यात्व की अनुभाग शक्ति को भी घटा लेता है। इस प्रकार उसके सम्यग्दर्शन के योग्य क्षयोपशम, विशुद्धि व देशना तो है ही। बस, इसी दिशा में सक्रिय रहने से प्रायोग्यलब्धि और करणलब्धि की शर्त भी समय पर स्वतः पूरी हो जाती है और सम्यग्दर्शन हो जाता है।

– अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : ४० (वीर नि. संवत् २५४७) ४६०/अंक : ५

सन्त निरन्तर चिन्तत ऐसैं.....

सन्त निरन्तर चिन्तत ऐसैं, आतमरूप अबाधित ज्ञानी।।

रोगादिक तो देहाश्रित हैं, इनतैं होत न मेरी हानी।
दहन दहत पर गगन न तदगत, गगन दहनता की विधि हानी।।१।।

वरणादिक विकार पुद्गल के, इनमें नहिं चैतन्य निशानी।
यद्यपि एकक्षेत्र-अवगाही, तदपि लक्षण भिन्न पिछानी।।२।।

मैं सर्वांगपूर्ण ज्ञायक रस, लवणखिल्लवत लीला ठानी।
मिलौं निराकुल स्वाद न यावत, तावत परपरिणति हित मानी।।३।।

'भागचन्द' निरद्वन्द निरामय, मूरति निश्चय सिद्ध समानी।
नित अकलंक अवंक शंक बिन, निर्मल पंक बिना जिमि पानी।।४।।

– कविवर पण्डित भागचन्दजी

शास्त्राभ्यास कैसे करें?

कितने ही जीव पुण्य-पापादिक फल के निरूपक पुराणादि शास्त्रों का, पुण्य-पाप क्रिया के निरूपक आचारादि शास्त्रों का तथा गुणस्थान, मार्गणा, कर्मप्रकृति, त्रिलोकादि के निरूपक करणानुयोग के शास्त्रों का अभ्यास करते हैं; परन्तु यदि आप इनका प्रयोजन नहीं विचारते, तब तो तोते जैसा ही पढना हुआ। और यदि इनका प्रयोजन विचारते हैं तो वहाँ पाप को बुरा जानना, पुण्य को भला जानना, गुणस्थानादिक का स्वरूप जान लेना तथा जितना इनका अभ्यास करेंगे उतना हमारा भला है - इत्यादि प्रयोजन का विचार किया है, सो इससे इतना तो होगा कि नरकादि नहीं होंगे, स्वर्गादिक होंगे; परन्तु मोक्षमार्ग की तो प्राप्ति होगी नहीं। प्रथम सच्चा तत्त्वज्ञान हो, वहाँ फिर पुण्य-पाप के फल को संसार जाने, शुद्धापयोग से मोक्ष माने, गुणस्थानादिरूप जीव का व्यवहारनिरूपण जाने इत्यादि ज्यों का त्यों श्रद्धान करता हुआ इनका अभ्यास करे तो सम्यग्ज्ञान हो।

सो तत्त्वज्ञान के कारण अध्यात्मरूप द्रव्यानुयोग के शास्त्र हैं और कितने ही जीव उन शास्त्रों का भी अभ्यास करते हैं; परन्तु वहाँ जैसा लिखा है, वैसा निर्णय स्वयं करके आपको आपरूप, पर को पररूप और आस्रवादि का आस्रवादिरूप श्रद्धान नहीं करते। मुख से तो यथावत् निरूपण ऐसा भी करें - जिसके उपदेश से अन्य जीव सम्यग्दृष्टि हो जायें। परन्तु जैसे कोई लडका स्त्री का स्वांग बनाकर ऐसा गाना गाये, जिसे सुनकर अन्य पुरुष-स्त्री कामरूप हो जायें; परन्तु वह तो जैसा सीखा वैसा कहता है, उसे कुछ भाव भासित नहीं होता; इसलिये कामासक्त नहीं होता। उसीप्रकार यह जैसा लिखा है, वैसा उपदेश देता है; परन्तु स्वयं अनुभव नहीं करता। यदि स्वयं को श्रद्धान हुआ तो अन्य तत्त्व का अंश अन्य तत्त्व में न मिलाता, परन्तु इसका ठिकाना नहीं है, इसलिये सम्यग्ज्ञान नहीं होता।

- मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ : २३६-२३७

सम्पादकीय

(गतांक से आगे....)

भरत का अन्तर्द्वन्द्व : नाटक

पहला अंक

सातवाँ दृश्य

(सभी लोग तो आराम से सो गये, पर सम्राट भरत को नींद नहीं आई। उनका चित्त भगवान ऋषभदेव के चरणों की वन्दना करने को आन्दोलित हो गया और वे अर्द्धरात्रि में ही कुछ चुने हुये अनुचरों के साथ भगवान के समवशरण में जा पहुँचे और जिनेन्द्र की वन्दना कर उनकी स्तुति करने लगे।)

(वीर)

वृषभेश आपकी दिव्यध्वनि सन्ताप मिटाने वाली है ।
भव-भोगों में उलझे मन की उलझन सुलझाने वाली है ।।
भवज्वाला में जलते जन को ठण्डक पहुँचाने वाली है ।
भव-भव में भटके प्राणी को भवपार लगाने वाली है ।। १ ।।

वे जन हैं महाभाग्यशाली जो प्रतिदिन सुनने आते हैं ।
वे जन तो महा अभागे हैं जो प्रतिदिन ना सुन पाते हैं ।।
मैं उन्हीं अभागों में से हूँ जिनको मिलता है लाभ नहीं ।
मैं प्रतिदिन आऊँ हे भगवन्! इतना मेरा सद्भाग्य नहीं ।। २ ।।

---

१. अध्याय ४, छन्द ४,५

प्रतिदिन की छोड़ो बात प्रभो! दिन में भी आना मुश्किल है।
इसलिये रात में आया हूँ दिन में आना न सम्भव है ।।
सब आप जानते हैं प्रभुवर! क्या कहूँ आपसे हे भगवन्! ।
बस यही चाहता हूँ स्वामिन् ! कैसे छूटे भव का बन्धन ।। ३ ।।

मैं कैसे करूँ प्रार्थना कुछ सबकुछ पहले से निश्चित है ।
उसमें वह फेरफार करना जो इच्छित है ना संभव है ।।
जो निश्चित है सो निश्चित है – यह दिव्यध्वनि में आया है।
यह कथन किसी से छुपा नहीं सबके सुनने में आया है ।। ४ ।।

यह बात आपने बतलाई हम सभी जानते हैं – यह सब ।
कुछ भी कहने की बात नहीं है आप जानते हैं सबकुछ ।।
(इतना कह के कुछ शान्त हुये भरतेश्वर चिन्तन मुद्रा में ।
वे चले गये वे चले गये अन्तरमुख अपने अन्तर में ।। ५ ।।[१])

(यहाँ भरतराज भक्ति करते-करते अन्तर्मुख हो गये, स्वयं में समा गये और वहाँ अर्द्धरात्रि में ही भगवान की दिव्यध्वनि खिरने लगी और सारी जनता दिव्यध्वनि का लाभ लेने के लिये उमड़ पड़ी।)

समवशरण में दिव्यध्वनि खिरने लगी-

"ॐ.....ॐ

(रेखता)

अनन्ते द्रव्य जगत में हैं किसी का कोई कुछ ना करे।
सभी अपने-अपने कर्त्ता सभी अपने को ही भोगें ।।

१. अध्याय ४, छन्द ६,७,८

सभी हैं न्यारे-न्यारे द्रव्य किसी का ना है कोई भाई !
सभी हैं अपने में परिपूर्ण किसी में नहीं कमी कोई।।

देह में रहे देह से भिन्न अरे यह अरस अरूप अगन्ध।
अरे भगवान आतमा का नहीं पर से कुछ भी सम्बन्ध।।
आत्मा को जानो हे भव्य उसी में अपनापन तुम करो।
उसी का ज्ञान उसी का ध्यान नित्य उसमें ही तुम रत रहो।।

ॐ.....ॐ''

(दिव्यध्वनि का प्रसारण पूर्ण होने पर समवशरण के बाहर आकर लोग आपस में चर्चा कर रहे हैं ---)

एक – आज तो हम सभी का बड़ा सौभाग्य रहा है कि मध्यरात्रि में भी दिव्यध्वनि सुनने मिली।

दूसरा – परन्तु यह बात समझ में नहीं आयी कि अचानक असमय में दिव्यध्वनि क्यों खिरी?

तीसरा – अरे! महाभाग्यशाली भरतराज पधारे हुए हैं न!

राजमाता यशस्वती नन्दा देवी – देखो, मेरा बेटा भरत कितना भाग्यशाली है कि उसके कारण भगवान ऋषभदेव असमय में बोल उठे।

महामात्य – हाँ! राजमाता हमारे भरतराज हैं ही इतने भाग्यशाली कि उनके निमित्त से असमय में भी दिव्यध्वनि खिरने लगी।

महाराज भरत – नहीं, माँ! नहीं महामात्यजी! भाग्यशाली तो तेरे बेटे वृषभसेन हैं, जो उनके गणधर बने हुये हैं और प्रतिदिन सात घंटे और बारह मिनिट उनकी दिव्यध्वनि सुनते हैं।

मैं, मैं; कैसे भाग्यशाली हो गया? मुझे तो भगवान की दिव्यध्वनि सुनने का दिन में अवकाश भी नहीं मिलता, मुझे तो दर्शन करने के लिये भी रात में आना पड़ता है।

राजमाता – नहीं, बेटाँ! ऐसा मत बोलो। तुम महाभाग्यशाली हो, तीर्थंकर ऋषभदेव के प्रथम पुत्र चक्रवर्ती सम्राट हो।

सम्राट भरत – नहीं, माँ! यह चक्ररत्न मुझे सौभाग्य नहीं, दुर्भाग्य सा लगता है; यह भगवान की दिव्यध्वनि सुनने में सबसे बड़ी बाधा है।

जिस दिन से भगवान की दिव्यध्वनि आरंभ हुई, उसी दिन से मेरी छाती पर आ बैठा। सारी दुनियाँ दिव्यध्वनि सुनती है और मैं जंगलों में भटकता रहता हूँ।

माँ, अब आप मुझे भाग्यशाली मत कहना; क्योंकि मुझको तो यह गाली-सी लगती है। पर क्या करूँ? विवश हूँ; निधत्ति-निकाचित कर्मोदय से यह चक्ररत्न मेरे गले पड़ गया है, अब तो इसे निभाना ही पड़ेगा।

(महामात्य और सेनापति की ओर मुड़कर भरत कहते हैं -)

हे महामात्य! हे सेनापति!! मैं तो इन सब में उलझना ही नहीं चाहता। मैं तो दिव्यध्वनि का लाभ लेना चाहता हूँ, आत्महित में ही संलग्न रहना चाहता हूँ।

महामात्य – ऐसा ही होगा महाराज! भरतक्षेत्र अखण्ड हो जाने से भगवान ऋषभदेव की दिव्यध्वनि का लाभ भी सभी को सहज भाव से प्राप्त होगा। देश में शान्ति रहेगी तो सहज ही धार्मिक वातावरण बनेगा।

महाराज भरत – मैं तो यही चाहता हूँ कि मेरे साथ सारा देश भी भगवान की दिव्यध्वनि का लाभ ले और खुश रहे।

पटाक्षेप

आठवाँ दृश्य

(सम्राट भरत, महामात्य और सेनापति विचार-विमर्श कर रहे हैं।)

सम्राट भरत – महामात्य दक्षिणांकजी! तीन खण्ड तो अनुकूल हो गये। अब शेष बचे तीन खण्डों को अनुकूल बनाने के लिये विजयार्ध पर्वत के उस पार जाना होगा; क्योंकि वे तीनों म्लेच्छ खण्ड विजयार्ध के उत्तर में हैं।

सेनापति – महाराज! विजयार्ध के उस पार जाने के लिये सिन्धु नदी की गुफा में से जाना होगा। गुफा द्वार वज्र कपाटों से बन्द हैं। उन्हें खोलना आसान नहीं है। उन्हें खोलना तो महाराज! आपके ही वश की बात है।

(जब दण्डरत्न के द्वारा चक्रवर्ती ने गुफा द्वार को खोला तो भयंकर विस्फोट हुआ और उसमें से भयंकर ज्वाला निकली।

उस भयंकर ज्वाला से जंगल झुलसने लगा, पशु-पक्षी आकुल-व्याकुल हो गये।

जब छह माह में ज्वालाएं शान्त हुई, तब सेना ने उसमें प्रवेश किया। अनेक बाधाओं को पार करते हुए वे सम्राट भरत सेना सहित विजयार्ध के उत्तर में जा पहुँचे।)

सम्राट भरत – हे महामात्य! अब आप यहाँ के राजाओं को अपने संगठन का स्वरूप समझाएँ और उन्हें अपने संगठन में शामिल करने के लिङ्ग अहिंसक प्रयास करें।

सेनापति और महामात्य एक साथ बोले – हाँ, महाराज! आप विश्राम कीजिये। हम प्रयास करते हैं। आपकी कृपा से जैसी सफलता अबतक प्राप्त हुई है, आगे भी सफलता मिलेगी।

(महामात्य और सेनापति ने सम्राट भरत को शुभ समाचार सुनाये।)

महामात्य दक्षिणांक – बहुत काम तो बड़ी सरलता से सहज हो गया; पर चिलात और आवर्त्त नामक राजा लड़ने को तैयार होकर आ गये। जब हमने अपनी शक्ति का परिचय दिया और सहज ही मित्रता के लाभ अत्यन्त वात्सल्य भाव से समझाये, तो उनकी भी समझ में आ गया।

सेनापति जयकुमार – आता कैसे नहीं? आपका अपार बल और सहज मित्रता का प्रस्ताव कैसे ठुकराया जा सकता था, कौन ठुकरा सकता था।

सम्राट भरत – चलो, कैसे भी हुआ, काम तो हो गया; छहों खण्ड अनुकूल हो गये और रंचमात्र भी बल का प्रयोग नहीं करना पड़ा।

(अब भरत सम्राट उस वृषभाचल पर्वत पर पहुँचे, जिस पर वह शिलाखण्ड था, जो चक्रवर्तियों के नामों से भरा पड़ा था। भरत को नाम लिखने के लिए रंच मात्र भी स्थान नहीं था।

यह देख भरत सम्राट माथे पर हाथ रखकर सोचने लगे –)

मैं तो समझ रहा था कि मैं पहला चक्रवर्ती हूँ और अभोगी पृथ्वी का पहला उपभोक्ता हूँ; पर यहाँ तो अगणित चक्रवर्तियों के नाम लिखे हैं, जो इस छह खण्ड पृथ्वी को मेरे पहले ही भोग चुके हैं। यह तो उनकी जूठन है, जो अब मेरे हिस्से में आई है।

भरत सम्राट – चलो, महामात्य! चलते हैं।

महामात्य – नहीं, महाराज! नाम तो लिखना ही होगा; क्योंकि ऐसा नियोग है कि प्रत्येक चक्रवर्ती अपना नाम लिखता ही है।

(सम्राट भरत ने उदासीन भाव से एक चक्रवर्ती का नाम मिटाकर अपना नाम लिख दिया। और सोचने लगे कि एक दिन नया चक्रवर्ती आयेगा और मेरा नाम मिटाकर अपना नाम लिख देगा।)

महामात्य – महाराज! नाम तो अच्छी तरह लिख दिया न।

सम्राट भरत – हाँ, लिख दिया। एक नाम मिटाकर अपना नाम लिख दिया। एक दिन ऐसा भी होगा कि अगला चक्रवर्ती आयेगा और मेरा नाङ्क मिटाकर अपना नाम लिख देगा।

मुझे तो इस चक्रवर्तित्व की रंच भी चाह नहीं थी, पर निधत्ति-निकाचित् कर्म के उदय को कौन टाल सकता है।

महामात्य – महाराज! मेरी समझ में तो यह बात आज आई है कि कर्मोदय की मजबूरी भी क्या होती है?

सम्राट भरत – हाँ, मंत्रिवर! यह सब तो ऐसा ही चलेगा।

(नेपथ्य में मधुरिम संगीत के साथ निम्नांकित गीत चल रहा है।)

(मानव)

जब चक्रवर्ती भरतेश्वर उत्तर भारत में पहुँचे ।
हाथी घोड़े रथ पैदल चतुरंगी सेना लेकर ।।
लख शक्तिपुंज चक्रेश्वर कुछ समझदार राजा तो ।
रे समझ गये थे सबकुछ कुछ समझाने से समझे ।। १ ।।[१]

१. अध्याय ५, छन्द १४

अधिकांश नरेश स्वयं ही आकर उनके चरणों में ।
झुक गये और विध-विध के दीने उपहार अनेकों ।।
बहिन-बेटियाँ ब्याही सम्बन्ध बनाये मधुरिम ।
सब विध सहयोगी बनकर कीना सम्पूर्ण समर्पण ।। २ ।।

कुछ समझाने से समझे कुछ धमकाने से समझे ।
कुछ उछले-कूँदे फिर भी आखिर में वे भी समझे ।।
कतिपय चिलात से राजा एवं आवर्त महीपति ।
लड़ने-भिड़ने को आये वे भी आखिर में समझे ।। ३ ।।

श्री जयकुमार सेनापति अर महामात्य ने सब कुछ ।
आगा-पीछा समझाया शक्तीबल भी दिखलाया ।।
अर सहज मित्रता के भी तो सभी लाभ समझाये ।
वात्सल्यभाव से सबको वे सही राह पर लाये ।। ४ ।।[१]

पटाक्षेप

राग रोग है

अहाहा! आत्मा का स्वभाव तो शुद्ध चैतन्यमय अमृतस्वरूप है, किन्तु अज्ञानी को इसका कभी अनुभव नहीं हुआ। इसकारण 'मैं ज्ञान ही हूँ' - ऐसा नहीं जानता, किन्तु 'मैं रागवाला या जहरवाला हूँ' - ऐसा मानता है। इसीकारण वह राग-विकार में स्वरूपपने प्रवर्तन करता है, परन्तु भाई! राग तो जहर है। जहर पीते-पीते अमृत का स्वाद नहीं आयेगा। राग रोग है और 'राग मेरा है' - ऐसी मिथ्या मान्यता महारोग है। **- प्रवचनरत्नाकर, भाग ३, पृष्ठ : ३४**

१. अध्याय ५, छन्द १५,१६,१७

नौवाँ दृश्य

(लोगों में ऐसी चर्चा चल पड़ी कि चक्रवर्ती अपने को ज्ञानी मानते हैं, फिर भी इतने भोगों के बीच रहते हैं, इतने भोगों को भोगते हैं? वे भोगते हैं या नहीं भोगते?

यह बात भरत के कानों में भी पहुँची। एक व्यक्ति ने भरत से सीधे ही पूँछ लिया।)

एक व्यक्ति – महाराज! मेरे चित्त में एक आशंका है कि आप इतने भोगों के बीच रहते हुये, उन्हें भोगते हुये अपने को कैसे संभालते हैं, आत्मानुभव कैसे करते हैं और इतना बड़ा राज-काज कैसे संभालते हैं?

(महाराज भरत ने एक तेल से भरा कटोरा मँगवाया और उसके हाथ में देकर कहा -)

सम्राट भरत – जाओ, रनिवास में जाकर सब-कुछ देखो, मेरी महारानियों से मिलो, सारी सम्पत्तियों को देखो। जो चाहो वह खाओ-पिओ, पर ध्यान रखो कि कटोरे से तेल की एक बूँद भी न गिरे।

(उसी के सामने नौकरों को आदेश दिया -)

जाओ, इनके साथ जाओ; सब कुछ दिखाओ। बढ़िया-बढ़िया पकवान खिलाओ, जो माँगे सो दो, पर ध्यान रखना कटोरे में से तेल की एक बूँद न गिरे।

(नंगी तलवार लिये दो सैनिक भी उसके साथ लगा दिये। उसी के सामने उन्हें आदेश दिया कि ध्यान रखना इसमें से एक बूँद तेल न गिरे। यदि गिर जाय तो तत्काल इसकी गर्दन को धड़ से अलग कर देना - कहते हुए एक बार फिर उससे कहा -)

सम्राट भरत – जाओ, सब कुछ देखो, खाओ-पिओ मौज करो,

रत्न भण्डार में से जितने रत्न ले जाना चाहो ले जावो, सोना-चाँदी ले जावो; पर ध्यान रखना कि कटोरे में से तेल की एक बूँद न गिरे। यदि गिरी तो बेमौत मारे जावोगे। तुम्हें कोई बचा नहीं पावेगा।

जावो, जावो, ...।

(वह व्यक्ति गया, दिनभर घूमा, पर कुछ भी न कर पाया। खाना भी नहीं खा पाया, दिनभर भूखा-प्यासा रहकर कटोरा ही संभालता रहा। शाम को राजदरबार में पहुँचा और भरत के चरणों में झुक कर बोला)

वह व्यक्ति – महाराज! सारा महल घूम आया, सब-कुछ देखा; पर कुछ नहीं देख पाया।

सब कुछ समझ गया, मुझे मेरे प्रश्नों का उत्तर मिल गया, शंकाओं का समाधान हो गया। मेरा चित्त पूरी तरह साफ हो गया।

मेरी समझ में अच्छी तरह आ गया है कि **आप भोगों को भोगते हुए भी उनसे कैसे विरक्त रहते हैं।**

हे महाराज! ये प्रश्न अकेले मेरे ही नहीं; हजारों लोगों के थे। सभी को शंकायें-आशंकायें थीं। अब सभी शंकाओं का समाधान हो गया, सभी की शंकाओं का समाधान हो गया।

(इसप्रकार भरतेश ने छहों खण्ड जीत लिये और अब अयोध्या की ओर प्रस्थान किया।)

(दोहा)

इसप्रकार भरतेश ने, जीते हैं छह खण्ड।
अब तैयारी में जुटे, अवधपुरी के पंथ।।।

(नेपथ्य में मधुरिम संगीत के साथ निम्नांकित गीत चल रहा है।)

(विष्णु)

रनिवासों के बीच रहें पर लिप्त नहीं होते ।
अगणित भोगों के बीच रहें पर उनमें ना उलझे ।।
यह सब कैसे हो सकता कुछ समझ नहीं आता ।
कोई कुछ भी कहें हमें स्वीकार नहीं होता ।। १ ।।

हमें स्वीकार नहीं होता चित्त में बात नहीं जमती ।
भाँति-भाँति की शंका चित में नित उठती रहती ।।
किससे समझें कौन बतावे समझ नहीं आता ।
क्यों ना पूछें भरतराज से यह विकल्प आता ।। २ ।।

जब यह चरचा भरतराज के कानों में आई ।
यह बात भरत ने उसको भाई कैसे समझाई ।।
एक तेल से भरा कटोरा हाथों में देकर ।
इसको भाई जावो तुम रनिवासों में लेकर ।। ३ ।।

सभी रानियों को दिखलाओ कपड़े-गहनों में ।
सजी हुई तैयार एकदम अपने महलों में ।।
सभी दिखाओ और खिलाओ विध-विध के पकवान।
ऐसी सेवा करो कि जैसे आये हों मिहमान ।। ४ ।।

इनका स्वागत खूब करो मालाओं से लादो ।
इनकी सेवा में दो-दो तुम नौकर रखवा दो ।।
दो सैनिक भी साथ रखो आगे-पीछे इनके ।
हाथों में नंगी तलवारें सदा रहे जिनके ।। ५ ।।

और सैनिकों से भरतेश्वर क्रोधित हो बोले ।
यदी तेल की एक बूँद भी भूमि पर फैले ।।
धड़ से मस्तक अलग करो बस उसी एक क्षण में ।
मेरा यह आदेश समझलो भली-भाँति मन में ।। ६ ।।

उससे बोले भरतेश्वर तुम सब देखो-जानो ।
और सभी भोगोपभोग भी भोगो मनमाने ।।
करो नहीं संकोच, करो वह जो मन में आवे ।
इतना रखना ध्यान तेल की बूँद न गिर जावे ।। ७ ।।

सोना चाँदी रत्न जवाहर जो चाहो ले लो ।
जैसा चाहो वैसा ही तुम भोजन बनवालो ।।
जितना चाहो उतना ले लो जो चाहो खा लो ।
भोग और उपभोगों से तुम अपना मन भर लो ।। ८ ।।

इतना रखना ध्यान कटोरा हाथों में रखना ।
एक बूँद भी तेल अरे धरती पर ना गिरना ।।
एक बूँद भी गिरी तो बेटा मारे जावोगे ।
कितने जोड़ो हाथ किन्तु फिर बच ना पावोगे ।। ९ ।।

दिनभर घूमा किन्तु नहीं वह कुछ भी कर पाया ।
दिनभर भूखा रहा किन्तु कुछ भी ना खा पाया ।।
भोग और उपभोगों को भी भोग नहीं पाया ।
भरे कटोरे को सम्भालने में ही दिन खोया ।। १० ।।

साँझ हुई तो भरतेश्वर के चरणों में आया ।
शीश झुकाकर नम्रभाव से सब कुछ बतलाया ।।
शंकाओं का समाधान हो गया पूर्णतः अब ।
इसी तरह मिल गये हमें प्रश्नों के उत्तर सब ।। ११ ।।

मेरे ही तो नहीं प्रभो ! यह प्रश्न हजारों के ।
मेरे जैसे प्रभो ! लोक में लोग हजारों हैं ।।
उन सबके प्रश्नों का उत्तर आज मिल गया है ।
इस घटना से चित्त सभी का साफ हो गया है ।। १२ ।।

निज आतम की ही सम्भाल में व्यस्त रहें भरतेश ।
इसीलिये सब भोग भोगते रहें अभोगे से ।।
भोगे और नहीं भोगे कुछ भी कह सकते हैं ।
जैसे मैंने नहीं भोगकर भी तो भोगें हैं।। १३ ।।[१]

पटाक्षेप

।। पहला अंक समाप्त ।।

आवश्यक सूचना

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित वीतराग विज्ञान (मासिक) व जैन पथप्रदर्शक (पाक्षिक) पत्रिकाओं सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने व समस्याओं के समाधान के लिए सम्पर्क करें। – **अखिल जैन शास्त्री, मो.** 7412078704
E-mail - veetragvigyanjpp@gmail.com

१. अध्याय ५, छन्द ३२ से ४२ तक

छहढाला प्रवचन

छह आवश्यक एवं शेष सात गुणों का वर्णन

सङ्कता सम्हारैं, थुति उचारैं, वंदना जिनदेव को।
नित करैं श्रुतरति, करैं प्रतिक्रङ्कण, तजैं तन अहङ्केवको।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की छठवीं ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

अब, पाँचवें छन्द के प्रारंभ की दो पंक्तियों में मुनियों के छह आवश्यकों का वर्णन करते हैं।

मुनिराज प्रतिदिन छह क्रियाएँ अवश्य करते हैं; इसीलिये इन्हें आवश्यक क्रिया कहा जाता है। वे प्रमादरहित होकर सावधानीपूर्वक सामायिक आदि छह क्रियाएँ यथायोग्य समयपर करते हैं। यहाँ उन क्रियाओं का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

१) सामायिक - मुनिराज प्रतिदिन प्रातः, दोपहर और सायंकाल चैतन्य के चिंतन में एकाग्र होकर वीतरागी समभावरूप सामायिक करते है। तीन कषाय के अभावरूप समभाव तो मुनियों को सदा होता है; फिर भी विशेष एकाग्रता के लिए राग-द्वेष रहित समभाव के अभ्यास के लिए सामायिक करते है। सामायिक में परिणामों की विशुद्धता बढते समय ऐसी दशा हो जाती है मानो अभी केवलज्ञान हो गया हो या अल्पकाल में होनेवाला हो, इसप्रकार प्रतिदिन सामायिक करना मुनियों का मूलगुण हैं।

२) स्तुति - तीर्थंकरों और सिद्ध भगवंतों की स्तुति करना मुनियों की दैनिक आवश्यक क्रिया है। मुनिराज भी जिनकी प्रतिदिन स्तुति-

वंदना करते हैं, उन भगवंतों की महिमा की क्या बात करें? सिद्धों के स्वरूप का चिंतन करते-करते मुनिराज, स्वभाव के लक्ष्य से निर्विकल्प हो जाते हैं।

३) वंदना - मुनिराज प्रतिदिन जिनदेव तथा आचार्य आदि की वंदना करते है - यही वंदना आवश्यक है।

४) स्वाध्याय - मुनिराज प्रतिदिन स्वाध्याय करते है। रात्रि में भी चैतन्य के चिंतनरूप उनका स्वाध्याय शुरू रहता है। मुनिराज रात्रि में बोलते नहीं है; फिरभी आत्मा का स्वाध्याय चलता रहता है। यही उनकी दैनिक आवश्यक क्रिया है।

५) प्रतिक्रमण - सुबह-शाम जो छोटे-बडे दोष अतिचार लगे हों, मध्यस्थ होकर उनकी आलोचना करके अपने परिणामों को शोध कर, दोषों का प्रतिक्रमण कर प्रतिदिन मुनिराज अपने चित्त को शुद्ध करते हैं।

६) कायोत्सर्ग - काया का उत्सर्ग अर्थात् शरीर की भी उपेक्षा करके मुनिराज वीरतापूर्वक ध्यान का प्रयोग करते है, यही कायोत्सर्ग है। मुनिराज प्रतिदिन कायोत्सर्ग करते हैं।

विशुद्ध परिणाम से सामायिक आदि छह क्रियाएँ प्रतिदिन अवश्य करना मुनिराजों के अट्ठाईस मूलगुणों में सम्मिलित है। मुनिराज इन क्रियाओं में सावधान रहते हैं। प्रमाद नहीं करते।

इसप्रकार पाँच महाव्रत, पाँच समिति, पाँच इन्द्रियविजय और छह आवश्यक कुल इक्कीस मूलगुणों का वर्णन हुआ।

अब, पाँचवें छन्द की अन्तिम दो पंक्तियाँ एवं छटवें छन्द में शेष सात मूलगुणों का वर्णन करते हैं।

जिनके न न्हौन, न दंतधोवन, लेश अम्बर आवरण।
भूमाहिं पिछली रयन में कछु शयन एकासन करन।।५।।

इकबार दिन में लें आहार, खडे अलप निज पान में।
कचलोंच करत न डरत परिषह सौं, लगे निज ध्यान में।।
अरि मित्र महल मसान कंचन, काँच निन्दन थुति करन।
अर्घावतारन असि प्रहारन, में सदा समता धरन।।६।।

देखो! यह मुक्ति के साधक मुनिराज के आचरण का वर्णन चल रहा है। देह के प्रति उदासीन मुनिराज देह की शोभा के लिए कुछ नहीं करते, क्योंकि उनका आत्मा स्वयं रत्नत्रय से शोभित हो रहा है। उन्हें देह के प्रति ऐसी उदासीनता होती है कि वे स्नान आदि कियाएँ ही नहीं करते।

मुनिराज के शेष सात मूलगुण निम्नानुसार हैं –

१) स्नान नहीं करना, २) दंतमंजन नहीं करना, ३) शरीर को वस्त्र से नहीं ढँकना, ४) यदि कदाचित निद्रा लेना हो तो रात्रि के पिछले प्रहर में जमीन पर एक करवट से लेटकर अल्पनिद्रा लेना। उन्हें अधिक निद्रा नहीं होती, दिन में सोने का तो प्रश्न ही नहीं। ५) दिन में एक बार ही आहार लेना, ६) खडे-खडे अपने हाथ में अल्प आहार लेना। हाथ में आहार लेने के कारण उन्हें 'हस्तभोजी' या 'करपात्री' कहते है। ७) केश-लुंचन करना।

इसप्रकार पहले कहे गये इक्कीस और ये सात – कुल अट्ठाईस मूलगुण जैन साधुओं के होते हैं। इन मूलगुणों के भंग होने पर अर्थात् वस्त्रादि अंगीकार करने पर, दिन में सोने पर या अनेक बार भोजन करने पर मुनिपना नहीं रहता।

अहो! जैन साधुओं की दशा अत्यन्त उत्कृष्ट होती है। वे परिषहों से नहीं डरते और आत्मध्यान में लीन रहते है। ध्यान द्वारा चैतन्य तत्त्व के आनन्द में समाये हुए मुनियों को उपसर्ग का क्या भय? मुनिवरों की चैतन्य-गुफा में तो भय का प्रवेश ही नहीं है। **(क्रमशः)**

नियमसार प्रवचन –

कारण समयसार

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ९८ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथा मूलत: इसप्रकार हैं –

पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसबंधेहिं वज्जिदो अप्पा।
सो हं इदि चिंतिज्जो तत्थेव य कुणदि थिरभावं ।।९८।।

(हरिगीत)

जो प्रकृति थिति अनुभाग और प्रदेश बंध बिन आतमा।
मैं हूँ वही - यह सोचता ज्ञानी करे थिरता वहाँ।।

प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्ध रहित जो आत्मा सो मैं हूँ – ऐसा चिन्तवन करता हुआ (ज्ञानी) उसी में स्थिरभाव करता है।

(अब, ९८ वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं) –

(मंदाक्रांता)

प्रेक्षावद्भि: सहजपरमानन्दचिद्रूपमेकं,
संग्राह्यं तैर्निरुपममिदं मुक्तिसाम्राज्यमूलम्।
तस्मादुच्चैस्त्वमपि च सखे मद्वच:सारमस्मिन्,
श्रुत्वा शीघ्रं कुरु तव मतिं चिच्चमत्कारमात्रे ।।१३३।।

(हरिगीत)

जो मूल शिव साम्राज्य परमानन्दमय चिद्रूप है।
बस ग्रहण करना योग्य है इस एक अनुपम भाव को।।
इसलिए हे मित्र सुन मेरे वचन के सार को।
इसमें रमो अति उग्र हो आनन्द अपरम्पार हो।।

श्लोकार्थ – जो मुक्तिसाम्राज्य का मूल है – ऐसे इस निरुपम, सहज परमानन्दवाले चिद्रूप को (चैतन्य के स्वरूप को) एक को बुद्धिमान पुरुषों को सम्यक् प्रकार से ग्रहण करना योग्य है; इसलिये मित्र! तू भी मेरे उपदेश के सार को सुनकर, तुरन्त ही उग्ररूप से इस चैतन्यचमत्कार मात्र के प्रति अपनी वृत्ति कर।

देखो! टीकाकार मुनिराज प्रेम से कहते हैं कि हे सखा! हे बन्धु! तू मेरे उपदेश का सार सुनकर चैतन्यस्वरूप की ओर अपना लक्ष्य कर।

चैतन्यस्वरूप को लक्ष्य में लेना ही उपदेश का सार है। चतुर पुरुषों को तो एक सहज परमानन्दमय चिद्रूप आत्मा को ही सम्यक् प्रकार से ग्रहण करना चाहिए। आत्मा का स्वरूप ही मुक्तिसाम्राज्य का मूल है – निरुपम और सहज परमानन्दवाला चिदानन्दस्वरूपी भगवान आत्मा ही मोक्षसाम्राज्य का मूल है; उसकी भावना से ही मोक्ष होता है। जो जीव ऐसे चिद्रूप आत्मा को एक को ही सम्यक् प्रकार से ग्रहण करते हैं, वे ही वास्तव में चतुर पुरुष हैं। पुण्य-पाप का विकल्प तो चैतन्य का स्वरूप ही नहीं है; अतः वह ग्रहण करने योग्य भी नहीं है। विवेकी आत्मार्थी ज्ञानी मुमुक्षु के लिए तो एक सहजानन्दमय चिद्रूप आत्मा ही ग्रहण करने योग्य है, उसी के ग्रहण से प्रत्याख्यान होता है; अतः हे मित्र! हमारे उपदेश का सार सुनकर तुरन्त ही उग्रपने इस चैतन्य चमत्कार मात्र के प्रति अपना लक्ष्य कर।

यहाँ 'हे सखा!'- ऐसा कहकर सम्बोधन किया है अर्थात् हमें तो चैतन्य के ग्रहण से प्रत्याख्यान वर्तता है और हमारा उपदेश सुनकर तुम

भी अपना लक्ष्य चैतन्य में करो - ऐसा करने पर हम और तुम समान हो जायेंगे।

चैतन्यस्वरूप का लक्ष्य करके उसमें एकाग्र हो जा - यही हमारे उपदेश का सार है। यहाँ प्रत्याख्यान की बात होने से उग्रपने चैतन्य का लक्ष्य करने को कहा है।

जिसे आत्मा का रंग लगा है और जो उसका लक्ष्य करके उसी में स्थिर होता है, उसे ही प्रत्याख्यान होता है। अपनी मति को चैतन्य में लगा - यही उपदेश का सार है। शुभाशुभ भाव तो प्रमाद हैं; चैतन्यस्वरूप का लक्ष्य करके उसकी श्रद्धा, ज्ञान एवं रमणता करना अप्रमाद है - प्रत्याख्यान है।

टीकाकार मुनिराज कहते हैं कि हे सखा! हे मित्र! चल न मेरे साथ! मेरे से तू अलग क्यों रह जाता है? मेरी तरह तू भी चैतन्य की ओर उग्ररूप से अपना लक्ष्य कर तो तुझे भी नियम से प्रत्याख्यान होगा। ●

प्रमादी होना योग्य नहीं

कई अज्ञानी जीव अपने को सम्यग्दृष्टि मानकर अभिमान करते हैं, उनसे आचार्य कहते हैं - हे भाई ! पंच महाव्रत के धारी मुनि भी आपा-पर को जाने बिना द्रव्यलिंगी ही रहते हैं तो फिर गृहस्थों की तो बात ही क्या कहें? इसलिए जिनवाणी के अनुसार तत्त्व-विचार में उद्यमी रहना योग्य है। थोडा-सा ज्ञान करके अपने को सम्यक्त्वी मानकर प्रमादी होना योग्य नहीं।

- उपदेश सिद्धान्त रत्नमाला, श्लोक ६४

समयसार की ४७ शक्तियों पर प्रवचन

स्वच्छत्व शक्ति

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की ४७ शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

(गतांक से आगे....)

आहाहा...! **द्रव्यदृष्टि ही सम्यग्दृष्टि है।**

समयसार में द्रव्यदृष्टि का अधिकार है। यहाँ (परिशिष्ट में) आचार्यदेव ने शक्तियों का अधिकार लिया है। इसमें कहा है कि **निज आत्मद्रव्य के सन्मुख ज्ञान की पर्याय झुकाने से चैतन्यद्रव्य का भान होकर जो अन्तरप्रतीति (आत्मानुभूति) प्रकट होती है; वही सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान है और वही धर्म है।**

यहाँ स्वच्छत्वशक्ति की बात चलती है। **जिसप्रकार दर्पण में घट-पट आदि प्रकाशित होते हैं, दर्पण में दिखनेवाले घट-पट वास्तव में घट अथवा पट नहीं हैं। वह तो दर्पण की स्वच्छता की ही अवस्था है; उसीप्रकार अमूर्तिक भगवान आत्मा असंख्यात अमूर्तिक चैतन्यप्रदेशों वाला है, उसमें लोकालोक का आकार प्रतिभासित होता है, वह वास्तव में लोकालोक नहीं है, वह तो स्वयं की स्वच्छत्वशक्ति का परिणमन है।**

अहो! लोकालोक को प्रकाशित करनेवाला भगवान आत्मा कोई अद्‌भुत दर्पण है। वह स्वयं में स्व को प्रकाशित करनेवाला भगवान

आत्मा कोई अद्भुत दर्पण है। वह स्वयं में स्व को प्रकाशित करता है तथा पर को भी प्रकाशित करता है।

भाई ! जरा स्थिर होकर और धीर होकर तू स्वयं के चैतन्यदर्पण में अन्तर्मुख देखे तो उसमें शुद्धस्वरूप दिखता है तथा साथ में लोकालोक भी जानने में आ जाता है।

अहो! भगवान आत्मा ऐसा आश्चर्यकारी चैतन्य चमत्कार प्रभु है। अतः हे भाई! तू पर को जानने की आकांक्षा से, आकुलता से, विरत हो और अन्तर्मुख होकर स्वरूप में ठहर जा।

आहाहा....! उससे परमसुख की प्राप्तिरूप आत्मोपलब्धि होगी। तेरे स्वच्छ उपयोग में लोकालोक स्वयमेव झलकेंगे। ऐसा स्वच्छत्वशक्ति का परिणमन है। आहाहा...! कैसी अद्भुत स्वच्छता है।

प्रश्न – आत्मा में जो लोकालोक का ज्ञान होता है, उसमें लोकालोक निमित्त है कि नहीं?

उत्तर – लोकालोक का स्वयं की पर्याय में ज्ञान हुआ, उसमें लोकालोक निमित्त अवश्य है; परन्तु लोकालोक के होने से यहाँ ज्ञान की पर्याय लोकालोक रूप नहीं है, ज्ञान की पर्याय का कर्त्ता लोकालोक नहीं है। **उपयोग की स्वच्छता में अनेकरूपता आना स्वयं की पर्याय का स्वभाव है; ज्ञान की पर्याय लोकालोक का कुछ भी कार्य नहीं करती है। निमित्त नहीं है – ऐसी बात नहीं है; परन्तु निमित्त से उपादान में कुछ कार्य होता है – ऐसा तीन काल में नहीं है।**

देखो, शास्त्र में आता है कि लोकालोक को जानने में केवलज्ञान निमित्त है। समस्त लोकालोक (छहद्रव्य, उनके द्रव्य-गुण-पर्याय,

अनन्त सिद्ध और अनन्त निगोद के जीव आदि) केवलज्ञान में ज्ञेयरूप निमित्त है। क्या उसका यह अर्थ है कि केवलज्ञान ने लोकालोक को बनाया है? ऐसा कदापि नहीं है। न तो लोकालोक केवलज्ञान का उपादान कारण है, न केवलज्ञान लोकालोक का उपादान कारण है – ऐसी वस्तुस्थिति है।

आहाहा...! यह स्वच्छत्वशक्ति द्रव्य के अनन्त भावों में व्यापक है, जिससे द्रव्य स्वच्छ, गुण स्वच्छ तथा स्वाभिमुख होनेवाली पर्याय भी स्वच्छ है, निर्मल है।

भाई! तेरी स्वच्छत्वशक्ति ऐसी है कि जिसप्रकार द्रव्यस्वभाव में विकार समाता नहीं है और द्रव्यस्वभाव में अभेदरूप से परिणमन करने पर प्रगट पर्याय में भी नहीं समाता है; उसीप्रकार आत्मा के स्वच्छ उपयोग में विकार का कण भी नहीं समाता है। अहो! ऐसी अद्भुत स्वच्छत्वशक्ति है।

इसप्रकार यहाँ स्वच्छत्वशक्ति का वर्णन पूर्ण हुआ। ●

संयोगों और पर्यायों की अनित्यता को जब हम अपनी मिथ्या मान्यताओं और राग-द्वेष के चश्मे से देखते हैं तो वह दु:खकर प्रतीत होती है, यदि सम्यग्ज्ञान के आलोक में देखें तो वस्तु का स्वभाव होने से शान्ति और सुखोत्पादक ही प्रतीत होंगी। दोष हमारी दृष्टि में है और उसे हम खोज रहे हैं लोक में। षट्द्रव्यरूपी लोक तो अपने परिणमनस्वभाव में पूर्ण व्यवस्थित है; अत: परिवर्तन लोक में नहीं, अपनी दृष्टि में करना है; किन्तु जगतजन जगत को अपने राग-द्वेषात्मक दृष्टिकोण से देखते हैं और तदनुसार ही उसे परिणमित करना चाहते हैं। उल्टी गंगा बहाने के इस दुष्प्रयत्न में हमने अनन्तकाल बिताया है और अनन्त दु:ख भी उठाये हैं।

– चिन्तन की गहराईयाँ, पृष्ठ १११

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : ज्ञानी द्रव्यदृष्टि के बल से राग को पुद्गल का मानता है तो क्या जिज्ञासु जीव भी राग को पुद्गल का मानता है ?

उत्तर : हाँ, जिज्ञासु जीव भी वस्तु के स्वरूप का चिन्तवन करते समय राग को आत्मा का नहीं मानता, पुद्गल का ही मानता है। राग तो उपाधिभाव है, पराश्रय से उत्पन्न होने के कारण मेरा नहीं है, पुद्गल का है – ऐसा विचार जिज्ञासु जीव करता है।

प्रश्न : राग पुद्गल का परिणाम है, पुद्गल का परिणाम है – ऐसा ही कहते रहेंगे तो राग का भय ही नहीं रहेगा और फिर तो महादोष उत्पन्न होगा ?

उत्तर : ऐसा नहीं होगा, राग की रुचि ही उत्पन्न नहीं होगी। राग की रुचि छोड़ने के लिये ही ऐसा जानना चाहिये कि राग पुद्गल का परिणाम है। भाई ! शास्त्र में कोई भी कथन स्वच्छन्दता उत्पन्न करने के लिये नहीं किया है, वीतरागता उत्पन्न करने के लिये ही किया है।

प्रश्न : भगवान की भक्ति आदि का शुभराग ज्ञानी को भी आता है और उस राग में पुद्गल ही व्याप्त होता है – ऐसा कहा जाता है; परन्तु यह बात बराबर नहीं लगती?

उत्तर : भाई ! राग तो जीव का ही परिणाम है; परन्तु पर के लक्ष्य से होता है, जीव का स्वभाव नहीं है, उपाधिभाव है; अत: उससे निवृत्त होने के लिये उसे पुद्गलकर्म भी कहा है।

प्रश्न : राग आत्मा का नहीं तो क्या राग जड़ में होता होगा ?

उत्तर : राग जीव का स्वाभाविक परिणाम नहीं है, इसलिये शुभाशुभ राग को जड़ और अचेतन कहा है। राग आत्मा का स्वरूप है ही नहीं, चैतन्यपुञ्ज कभी रागरूप हुआ ही नहीं। आत्मा के भान बिना अनन्तबार नववें ग्रैवेयक में गया, किन्तु सम्यग्दर्शन बिना लेशमात्र भी सुख नहीं पाया। अलिंगग्रहण के बोल में भी यति की क्रिया पंचमहाव्रतादि का आत्मा में अभाव कहा है।

समयसार गाथा 181 से 183 तक में भी कहा है कि जाननक्रियारूप आत्मा और क्रोधादि क्रियारूप आस्रव – ये दोनों अत्यंत भिन्न हैं। उनके प्रदेश भिन्न होने से दो वस्तुओं की सत्ता ही भिन्न-भिन्न है। बात यह है कि आस्रव के ऊपर से दृष्टि हटाना और द्रव्य के ऊपर दृष्टि देना – यहाँ यही अभीष्ट है। जहाँ तेरी वस्तु है नहीं, वहाँ से दृष्टि उठा ले और जहाँ तेरी वस्तु है, वहाँ दृष्टि डाल; तभी तुझे सुख और शान्ति मिलेगी।

प्रश्न : क्या राग आत्मा से भिन्न है और क्या यह निषेध करने योग्य भी है?

उत्तर : हाँ, राग आत्मा से भिन्न है; राग में ज्ञानगुण नहीं है और जिसमें ज्ञानगुण न हो, उसको आत्मा कैसे कहा जाय – इसलिये राग है, वह आत्मा नहीं है। आत्मा की शक्ति के निर्मल परिणाम से राग का परिणाम भिन्न है। आत्मा से भिन्न कहो या निषेध योग्य कहो – एक ही बात है। मोक्षार्थी को जिसप्रकार पराश्रित राग का निषेध है, उसीप्रकार पराश्रित ऐसे सर्व व्यवहार का भी निषेध ही है, राग और व्यवहार दोनों एक ही कक्षा में हैं – दोनों ही पराश्रित होने से निषेध योग्य हैं और उनसे विभक्त चैतन्य का एकत्वस्वभाव वही परम आदरणीय है। **(क्रमशः)**

समाचार दर्शन -

गुरुदेवश्री के नाम पर खुला देश का पहला महाविद्यालय

श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन महाविद्यालय का उद्घाटन

कोटा (राज) : यहाँ दिनांक ०७ नवम्वर २०२१ को रानपुर स्थित श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन महाविद्यालय का विधिवत् उद्घाटन स्वायत्त शासन नगरीय विकास एवं आवासन तथा संसदीय कार्य मंत्री (राजस्थान सरकार) माननीय श्री शांतिकुमारजी धारीवाल के करकमलों द्वारा हुआ।

इस अवसर पर मंगल कलश श्रीमती सुनीता जैन तथा श्रीमती चंद्रा जैन बजाज ने मंत्रीजी के कर कमलों में भेट किया, जिसको मंत्रीजी ने कॉलेज के प्राचार्य के कमरे में स्थापित किया। मंच पर विशिष्ट अतिथि कोटा विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार डॉ. रामकुमारजी उपाध्याय, नगर विकास कोटा के पूर्व अध्यक्ष श्री रविन्द्रजी त्यागी, ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री प्रेमचंदजी बजाज, ट्रस्ट के महामंत्री श्री ध्याताजी बजाज, संस्था के सचिव श्री अविनाशजी जैन, कोषाध्यक्ष श्री धर्मेन्द्रजी शास्त्री एवं एस.एस.आई के संस्थापक अध्यक्ष श्री गोविन्दरामजी मित्तल उपस्थित रहे। अन्य विशिष्ट अतिथियों के रूप में श्रीमान परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, श्री जिनेन्द्रजी शास्त्री उदयपुर, पूर्व महापौर डॉ. रत्नाजी जैन, अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक श्री भगवतसिंहजी हिंगड़ तथा श्री प्रवीणजी जैन की गरिमामय उपस्थिति रही।

स्वागत भाषण में श्री प्रेमचन्दजी बजाज ने कहा कि श्री शांतिकुमारजी धारीवाल की इस कार्य में बहुत अनुमोदना रही। कॉलेज की जगह को अवैध कब्जे से दूर कराने में अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक श्री पवनजी जैन का अभूतपूर्व सहयोग रहा। कॉलेज के निर्माण में सर्वाधिक योगदान संस्था के सचिव श्री अविनाशजी का रहा है।

श्री अविनाशजी ने संस्था परिचय देते हुये कहा कि कॉलेज में अभी बी.ए. और बी.एस.सी. के ७०-७० छात्रों को प्रथम वर्ष में प्रवेश दिया जाएगा। यहाँ ११२ कमरों का हॉस्टल भी तैयार है। कॉलेज एवं हॉस्टल की आय से मुमुक्षु आश्रम द्वारा संचालित धरसेन महाविद्यालय और समन्तभद्र विद्यानिकेतन का संचालन किया जाएगा।

इस अवसर पर उद्घाटन सभा में बोलते हुये मंत्री श्री शांतिकुमारजी धारीवालजी ने उक्त हृदयोगार व्यक्त करते हुए कहा कि शिक्षा नगरी कोटा में यह महाविद्यालय

निश्चित रूप से अपना एक विशिष्ट स्थान स्थापित करेगा और भविष्य में यूनिवर्सिटी का रूप धारण करेगा, यही मेरी मंगल भावना है।

इस प्रसंग पर काव्यांजलि एवं मंजूषा वाचन श्री संजयजी शास्त्री ने किया और संस्था के पदाधिकारियों ने श्री धारीवालजी को तिलक लगाकर, साफा पहनाकर स्मृति चिन्ह भेंट किया। मंगलाचरण श्रीमती चंद्राजी बजाज ने किया। मंगलनृत्य कुमारी आज्ञा जैन तथा आरोही जैन ने किया। समारोह का सफल संचालन श्री संजयजी शास्त्री ने किया। आभार कोषाध्यक्ष श्री धर्मेंद्रजी शास्त्री ने व्यक्त किया।

वीर निर्वाणोत्सव पर शिक्षण शिविर सम्पन्न

१) तीर्थधाम मङ्गलायतन : श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट एवं कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन के संयुक्त तत्त्वावधान में आध्यात्मिक शिक्षण शिविर दिनांक 30 अक्टूबर से 04 नवम्बर तक विधान, पूजन, प्रवचन, वाचना, जिनेन्द्रभक्ति, सांस्कृतिक कार्यक्रमादि अनेक आयोजनों सहित सम्पन्न हुआ।

31 अक्टूबर को मंगल कलश शोभायात्रा के पश्चात् ध्वजारोहण श्री जैनबहादुरजी जैन परिवार, धवलाजी विराजमान श्री कमलजी मधुजी बोहरा परिवार एवं शिविर उद्घाटन श्री विजयजी बड़जात्या व श्री पदमजी पहाड़िया द्वारा सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित देवेन्द्रकुमारजी बिजौलियाँ, पण्डित प्रदीपजी झांझरी, डॉ. योगेशजी अलीगंज, पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, ब्र. सुकुमालजी झांझरी, पण्डित अशोकजी लुहाड़िया, पण्डित सचिनजी जैन, डॉ. सचिन्द्रजी शास्त्री, डॉ. विवेकजी शास्त्री इन्दौर, पण्डित सुनीलजी धवल, पण्डित दीपकजी धवल, पण्डित रिमांशुजी शास्त्री, पण्डित दिव्यांशजी शास्त्री एवं श्री अशोकजी जबलपुर का समागम प्राप्त हुआ।

प्रात: डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित राजमलजी पवैया एवं पण्डित अभयकुमारजी देवलाली द्वारा रचित तीन लघुसमयसार विधान अलग-अलग दिन सम्पन्न हुए।

प्रतिदिन गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन पश्चात् पण्डित विमलजी झांझरी के प्रवचनों का लाभ मिला। दोपहर में बाल ब्र. कल्पनाबेनजी द्वारा श्लोक पाठ एवं धवलाजी वाचना के पश्चात् समागत विशिष्ट विद्वानों के प्रवचनों का लाभ मिला। सायंकाल जिनेन्द्रभक्ति के उपरान्त पण्डित जे.पी.जी दोशी एवं पण्डित राजेन्द्रजी जबलपुर के प्रवचनों का लाभ मिला। सभा संचालन पण्डित सुधीरजी शास्त्री ने किया।

२) देवलाली : यहाँ दिनांक 01 से 05 नवम्बर 2021 तक पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली द्वारा भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव पर आयोजित श्री समयसार कलश मण्डल विधान सानन्द सम्पन्न हुआ।

प्रात:काल श्री समयसार कलश मण्डल विधान व गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के पश्चात् समयसार कलश विधान की जयमाला (आचार्य अमृतचंद्र का अमृत) पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यानों का लाभ मिला, इसके पूर्व समयसार पर पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड के प्रवचन हुए।

दोपहर में बाल ब्र. अभिनन्दनजी शास्त्री एवं बाल ब्र.हेमचन्दजी 'हेम' के प्रवचन का लाभ मिला। रात्रिकालीन सत्र में जिनेन्द्र भक्ति के पश्चात् पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित सुरेशजी शास्त्री गुना एवं पण्डित गजेन्द्रजी शास्त्री के प्रवचन का लाभ मिला। मुख्य प्रवचन के रूप में पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड द्वारा मोक्षमार्ग प्रकाशक के नोवें अधिकार पर चर्चा की गई।

दिनांक 04 नवम्बर को भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव बहुत ही धूमधाम से निर्वाण लाडू चढ़ाकर मनाया गया। विधिविधान के समस्त कार्यक्रम पण्डित विरागजी शास्त्री व पण्डित अंकितजी शास्त्री लूणदा एवं विधान पण्डित समकितजी शास्त्री व पण्डित उर्विषजी शास्त्री देवलाली द्वारा सम्पन्न हुआ।

अंत में संस्थान के ट्रस्टी श्री विपुलभाई मोटाणी द्वारा आभार व्यक्त किया गया।

वीर निर्वाणोत्सव : एक परिचर्चा

भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव के अवसर पर दिनांक 03 नवम्बर को अध्यात्मवेत्ता डॉ. संजीवकुमारजी गोधा की अध्यक्षता में ऑनलाइन परिचर्चा का आयोजन किया गया। परिचर्चा में भगवान महावीर के जन्म से लेकर निर्वाण तक के इतिहास, उनके निर्वाणतिथि सम्बन्धी अनेक मान्यताओं, निर्वाण सम्बन्धी भ्रांतियों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण बातों पर विशेष चिन्तन व समाधान दिए गए।

अध्यक्ष महोदय के अतिरिक्त पण्डित अमनजी शास्त्री, पण्डित आप्तजी शास्त्री, पण्डित पलजी शास्त्री, पण्डित पवित्रजी शास्त्री, पण्डित शुभांशुजी शास्त्री एवं पण्डित अखिलजी शास्त्री द्वारा विषयों पर प्रकाश डाला गया। परिचर्चा का सफल संचालन पण्डित सम्भवजी शास्त्री एवं पण्डित संयमजी शास्त्री दिल्ली ने किया।

टोडरमल स्मृति दिवस समारोह सम्पन्न

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय द्वारा कालजयी विद्वान आचार्यकल्प पण्डितप्रवर टोडरमलजी के स्मृति दिवस के अवसर पर विशिष्ट सभा का आयोजन किया गया। कार्तिक सुदी पंचमी, दिनांक 9 नवम्बर 2021 को रात्रि में आयोजित इस सभा की अध्यक्षता अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने की।

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने पण्डित टोडरमलजी की मृत्यु की तिथि एवं उसके कारणों को इतिहास में उद्धृत प्रमाणों के आधार से स्पष्ट किया। साथ ही कहा कि मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ में मिथ्यात्व का गृहीत-अगृहीत के भेद से वर्णन पण्डितजी का नवीन प्रमेय है और यही उपलब्ध मोक्षमार्गप्रकाशक का मूल प्रतिपाद्य है।

पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने मोक्षमार्गप्रकाशक की अद्वितीयता बताते हुए कहा कि अन्य ग्रन्थों में तो मात्र लक्ष्य एवं लक्ष्य को प्राप्त करने के मार्ग का वर्णन है; परन्तु इसमें हम कहाँ खड़े हैं, कहाँ भूल कर रहे हैं, इस बात को स्पष्ट किया है।

डॉ. शांतिकुमारजी पाटील ने मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ के अनेक उद्धरण देते हुए पण्डित टोडरमलजी पल्लवग्राही विद्वान ना होकर मूलग्राही विद्वान हैं, जो हर बात को अत्यधिक सूक्ष्मता से देखते हुए मूल बात को पकडते हैं।

डॉ. संजीवकुङ्कारजी गोधा ने कहा कि पण्डितजी को इतिहास में तीन श्रद्धांजलि समर्पित हो चुकी हैं। १) गुरुदेवश्री द्वारा मुखपट्टी का त्याग, २) गोदीकाजी द्वारा टोडरमल स्मारक का निर्माण, ३) डॉ. भारिल्लजी द्वारा टोडरमलजी पर पीएच.डी.।

डॉ. दीपकजी वैद्य ने कहा कि पण्डित टोडरमलजी के उदाहरणों से यह प्रतिलक्षित होता है की वे चिकित्सा सम्बन्धी विचारों के भी गहरे जानकार थे।

पण्डित पीयूषजी शास्त्री ने पण्डित टोडरमलजी के विषय में और शोध की आवश्यकता पर बल दिया। साथ ही कहा कि उनकी सत्य के निरूपण के प्रति निष्ठा अनुकरणीय है।

छात्र वक्तव्य में समर्थ जैन, हरदा ने पण्डित टोडरमलजी की मृत्यु के सम्बन्ध में एवं स्वानुभव जैन, खनियांधाना ने साहित्य साधना के सम्बन्ध में विचार रखे। सत्र का संचालन समकित जैन, ईसागढ़ एवं मंगलाचरण सन्देश जैन, दिल्ली ने किया।

कार्यक्रम उपप्राचार्य **पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री** के निर्देशन में सम्पन्न हुआ।

दीपावली पर आयोजित कार्यक्रम

१) जयपुर (राज.) : यहाँ पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के तत्त्वावधान में वीर निर्वाणोत्सव के अवसर पर पंचतीर्थ जिनालय स्थित पावापुरी की मनोहर रचना के समीप डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, डॉ. शांतिकुमारजी पाटील, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल, श्री हीराचंदजी वैद्य, पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री एवं बापूनगर संभाग के साधार्मियों की उपस्थिति में पूजन एवं निर्वाण लाडू के कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

तत्पश्चात् डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के दीपावली पर विशेष प्रवचनों का प्रसारण एवं समयसार कलश विधान की जयमाला पर विशेष व्याख्यान का लाभ मिला।

२) रामपुरा (कोटा) : यहाँ मुमुक्षु मण्डल के तत्त्वावधान में भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम के प्रारम्भ में नित्य नियम पूजन के पश्चात् पण्डित संजयजी शास्त्री कोटा द्वारा भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव का रोचक परिदृश्य मनमोहक शैली में प्रस्तुत किया गया।

३) आत्मार्थी ट्रस्ट : यहाँ श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द कहान आत्मार्थी ट्रस्ट दिल्ली के आयोजकत्व में दि. 4-5 नवम्बर को भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव के अवसर पर बाल ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री सनावद, पण्डित रजनीभाई हिम्मतनगर, पण्डित अशोकजी उज्जैन आदि की उपस्थिति में स्व. श्री विमलकुमारजी परिवार एवं जिनमंदिर में प्रतिमा विराजमान करने वाले ३१ परिवारों द्वारा निर्वाण लाडू समर्पित किया गया। साथ ही पण्डित रजनीभाई दोषी हिम्मतनगर के व्याख्यान का लाभ मिला।

४) टी.वी. के पारस चैनल पर दिनांक 03 नवम्बर 2021 को डॉ. संजीवकुमारजी गोधा के दीपावली पर्व से सम्बन्धित समस्त प्रसंग एवं तथ्यों पर प्रकाश डालने वाले 53 मिनिट के प्रासंगिक प्रवचन का प्रसारण किया गया। ज्ञातव्य है कि रोजाना रात्रि 10:00 बजे पुरूषार्थ सिद्धि उपाय विषय पर प्रवचनों का प्रसारण किया जा रहा है।

५) खनियाधांना (म.प्र.) : यहाँ भगवान महावीर के निर्वाणोत्सव पर प्रात: निर्वाण लाडू के कार्यक्रम के साथ रात्रिकालीन सत्र में पण्डित चर्चितजी शास्त्री खनियाधांना द्वारा गौतम गणधर के जीवनवृत्तों पर विशेष प्रकाश डाला गया। साथ ही आदर्शों का मेला नामक विशिष्ट कार्यक्रम के अन्तर्गत जिनशासन के आदर्श व्यक्तित्वों के जीवन में घटित प्रेरक प्रसंगों को लघु नाटिकाओं के रूप में प्रस्तुत किया गया।

वैराग्य समाचार

1. श्रीमती कृष्णा देवीजी जैन धर्मपत्नी स्वर्गीय श्री पदमचंदजी सर्राफ (आगरा) मुंबई का दिनांक २१ अक्टूबर २०२१ को शांत परिणामों से तत्त्वचिंतन पूर्वक देह परिवर्तन हो गया। पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित समस्त गतिविधियों में आपकी सदैव भरपूर अनुमोदना रहा करती थी। खासकर महाविद्यालय के विद्यार्थियों को देखकर आपको बहुत प्रसन्नता होती थी। आप सरल स्वभावी विदुषी थी।

आप तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की समधन, पण्डित बिपिनजी शास्त्री मुंबई की मातुश्री एवं श्रीमती अध्यात्मप्रभाजी की सासूमाँजी थी। आपके जीवन में एक अपूर्व विशुद्धता रही है जो कि अनुकरणीय है। आप ना केवल स्वयं ही तत्त्वज्ञान से जुड़ी रहीं; अपितु पूरे परिवार को भी तत्त्वज्ञान से जोडे रखा।

२. खनियांधाना निवासी **श्री कपूरचन्दजी जैन चौधरी** का 10 नवम्बर 21 को 88 वर्ष की उम्र में निधन हो गया। आप 1970 में आयोजित विदिशा शिविर के माध्यम से जुड़े और फिर अपने जीवन को जिनधर्म की प्रभावना में मोड़ दिया। आपने अपने परिवार के सभी बच्चों (नयन शास्त्री, रजत शास्त्री, अमितेन्द्र शास्त्री, प्रजल शास्त्री एवं शाश्वत महिमा शास्त्री) को विद्वान बनने हेतु टोडरमल महाविद्यालय में भेजा। आपकी स्मृति में 11000/- रूपये की राशि दान स्वरूप प्राप्त हुई; एतदर्थ धन्यवाद।

3. ग्वालियर निवासी **श्रीमती ग्यारसीबाई जैन** धर्मपत्नी स्वर्गीय श्री गणपतलालजी जैन का १०३ वर्ष की आयु में आत्मभावना पूर्वक दिनांक ०९ अक्टूबर २०२१ को देह परिवर्तन हो गया। टोडरमल स्मारक द्वारा संचालित गतिविधियों में आपका सक्रिय योगदान एवं विद्वानों के प्रति सदैव वात्सल्यभाव रहता था।

4. मुंबई निवासी श्री वसंतभाई, रमेशभाई विक्रमभाई कोटडिया की मातुश्री **ताराबेन मणिलालजी** कोटडिया (ओराण निवासी) का ९ अक्टूबर २०२१ को ८७ वर्ष की आयु में पंचपरमेष्ठी के स्मरण पूर्वक देह परिवर्तन हुआ। सात दिन पूर्व ही माताजी की भावना अनुसार उनके पुत्रों ने परिवार सहित गजपंथा और देवलाली के जिनालयों की वंदना कराई। आप की स्मृति में २५०० रूपये की राशि प्राप्त हुई।

दिवंगत सभी आत्मायें परमपद को प्राप्त करें – यही भावना है।

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन इंदौर द्वारा आयोजित

श्री इंद्रध्वज महामंडल विधान

26 दिसंबर 2021 से 1 जनवरी 2022 तक

निवेदक

श्री कुंदकुंद कहान दिगंबर जैन शासन प्रभावना ट्रस्ट, इंदौर

Watch On YouTube / Dhaidweep Jinaytan

Click For Registration

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2021-23*

तीर्थधाम जम्बूद्वीप परिकल्पना के दर्पण में...

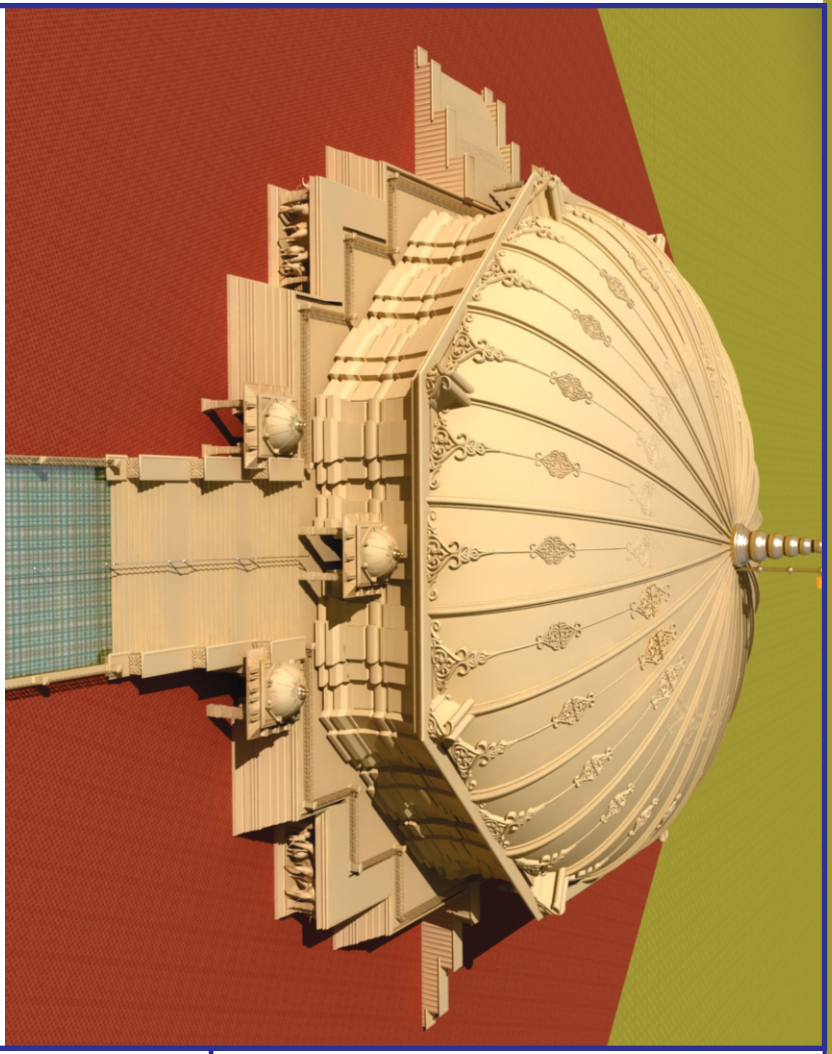

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी.
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

प्रकाशन तिथि : 21 नवम्बर 2021

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**